साप्ताहिक
Live not just breaTHE

दि कार्मिक पोस्ट

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

वर्ष : 5, अंक : 36 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 29 अप्रैल से 5 मई 2020 पेज : 4 कीमत : 3 रुपये

कब आएगा और कितना भयंकर होगा तूफान, पता लगाएगा यह मॉडल

समुद्र के जल स्तर के बढ़ने और तूफान आने से कितने लोगों को खतरा होगा, वैज्ञानिकों के लिए इसका सटीक पूर्वानुमान लगाना हमेशा से ही चुनौतीपूर्ण रहा है। लेकिन अब वैज्ञानिकों की एक अंतर्राष्ट्रीय टीम ने इन प्राकृतिक घटनाओं के प्रभाव का बेहतर ढ़ग से पता लगाने के लिए एक नया मॉडल बनाया है।

इस नए अंतरराष्ट्रीय अध्ययन में एक अनोखी सांख्यिकीय पद्धति का उपयोग किया गया है, जो पहली बार - ज्वार और तूफान के बीच महत्वपूर्ण संबंध को बताती है। ये प्राकृतिक शक्तियां मौसम संबंधी प्रभावों, जैसे तेज हवाओं और कम वायुमंडलीय दबाव के कारण होते हैं। इनके प्रभावों को अक्सर प्रकृति की जटिलता के कारण समझना मुश्किल होता है। यह अध्ययन जर्नल नेचर कम्युनिकेशंस में प्रकाशित हुआ है।

सेंट्रल यूनिवर्सिटी फ्लोरिडा के सहायक प्रोफेसर और सह-अध्ययनकर्ता वाहल कहते हैं कि एक अच्छे मॉडल का होना बहुत आवश्यक है। ताकि मॉडल के माध्यम से योजना बनाने वाले लोगों को गर्म होती जलवायु के खतरनाक परिणामों के बारे में समझने, इनसे निपटने में मदद मिल सके।

नई पद्धति का उपयोग करते हुए टीम ने पाया कि समुद्र के नजदीक, तटीय बाढ़ से प्रभावित होने वाले लोगों की संख्या, इससे निपटने के लिए लगने वाला खर्च का पहले जितना अनुमान लगाया गया था, उससे कहीं अधिक हो सकता है।

अध्ययन का नेतृत्व करने वाले कृषि और पर्यावरण विज्ञान के सहायक प्रोफेसर अर्ने आर्न्स कहते हैं कि वैश्विक अध्ययन में अक्सर अनिश्चितताएं शामिल होती हैं। इसलिए कुछ प्राकृतिक प्रक्रियाओं को नजरअंदाज कर दिया जाता है। हालांकि काफी हद तक इस बारे में पता चल जाता है कि चरम घटनाओं के दौरान तट पर पानी का स्तर कितना ऊंचा होगा आदि।

आर्न्स कहते हैं कि हमारे इन परिणामों से हम वास्तव में यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकते कि भविष्य में समुद्र के स्तर में कितनी वृद्धि होगी। इसके परिणाम हमारे द्वारा वर्तमान में लगाए गए अनुमानों की तुलना में कितने खतरनाक होंगे, लेकिन यह इस बात पर प्रकाश डालता है कि हमारी कार्यप्रणाली में अनिश्चितताएं कहां हैं, भविष्य में किए जाने वाले शोधों में संबंधित प्रक्रियाओं को बेहतर ढंग से शामिल किया जाना चाहिए।

शोधकर्ता कहते हैं कि ये नए अनुमान वैश्विक स्तर पर और स्थानीय स्तर पर तटीय सुरक्षा में सुधार करने में मदद करेंगे, खासकर जब छोटे समुदायों तक सीमित पहुंच हो।

अतीत में जब वैज्ञानिकों ने इसी तरह के अध्ययन किए, तो उन्होंने कंप्यूटर मॉडल से प्राप्त जानकारी का उपयोग किया, जो प्रकृति के प्राकृतिक प्रक्रियाओं का अनुमान लगाती है, जिनमें ज्वार और तूफान शामिल है। ऐसे मॉडल वैश्विक आकलन के लिए महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि सभी तटीय स्थानों की माप मौजूद नहीं होती है। हालांकि, नई विधि इस कार्य को अधिक सटीकता से कर सकती है।

शोधकर्ता कहते हैं कि हमारे पास अब एक सामान्य दृष्टिकोण है, जिसके साथ हम पिछले अध्ययनों के परिणामों का पुनर्मूल्यांकन कर सकते हैं। इस नए मॉडल की मदद से अब तूफान आने से पहले तथा इसका स्वरूप कितना भयंकर होगा इस बात का पता लगाया जा सकता है। इससे समुद्र के नजदीक तटीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को बचाया जा सकता है। आगे आने वाले तूफानों से निपटने के लिए योजना बनाई जा सकती है।

38 डिग्री से अधिक तापमान रानी मधुमक्खी के लिए सही नहीं

ब्रिटिश कोलंबिया विश्वविद्यालय और उत्तरी कैरोलिना स्टेट यूनिवर्सिटी के नए शोध से वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि जलवायु परिवर्तन पक्षियों और मधुमक्खियों को किस तरह प्रभावित कर रहा है।

नेचर सस्टेनेबिलिटी में प्रकाशित इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने रानी मधुमक्खी में संग्रहित शुक्राणु का विश्लेषण करने के लिए मास स्पेक्ट्रोमेट्री नामक एक तकनीक का इस्तेमाल किया। इससे पता चला कि जब रानी मधुमक्खी अत्याधिक तापमान के संपर्क में आती है तो इसके पांच प्रोटीन सक्रिय हो जाते हैं।

माइकल स्मिथ लैब्स के बायोकेमिस्ट और मुख्य अध्ययनकर्ता एलिसन मैकएफी कहते है कि जैसे मनुष्यों में हृदय रोग के खतरे को जानने के लिए कोलेस्ट्रॉल के स्तर का उपयोग किया जाता है, उसी तरह ये प्रोटीन संकेत दे सकते हैं कि क्या एक रानी मधुमक्खी ने गर्मी में तनाव का अनुभव किया या नहीं। यदि हम मधुमक्खियों के बीच गर्मी के आघात के पैटर्न को देखे, तो अब हमें वास्तव में अन्य कीड़ों के बारे में चिंता करनी होगी।

हालांकि अन्य कीड़ों की तुलना में मधुमक्खियां अपने आपको वातावरण के अनुकूल ढाल लेती है। ये बहुत उपयोगी होती हैं, क्योंकि इनको दुनिया भर में लोगों द्वारा पाला जाता है।

शोधकर्ताओं को विशेष रूप से रानी मधुमक्खियों में दिलचस्पी थी, क्योंकि उनकी प्रजनन क्षमता सीधे एक कॉलोनी की उत्पादकता से जुड़ी होती है। यदि रानी द्वारा संग्रहित शुक्राणु क्षतिग्रस्त हो जाता है, तो वह विफल हो सकती है जब उसके पास पर्याप्त नर मधुमक्खी का उत्पादन करने के लिए पर्याप्त जीवित शुक्राणु नहीं होते है, तो कॉलोनी को बनाए रखने के लिए कार्यकर्ता मधुमक्खियों की संख्या भी कम हो जाती है।

मैकएफी ने कहा हम यह जानना चाहते थे कि रानी मधुमक्खियों के लिए %सुरक्षित% तापमान क्या होता है? गर्मी के संपर्क में आने के दो संभावित मार्ग हैं। पहला, उनकी यात्रा के दौरान और दूसरा, कॉलोनियों के अंदर रहने पर। यह जानकारी मधुमक्खी पालकों के लिए महत्वपूर्ण है, जिनके पास यह पता करने का कोई तरीका नहीं है कि मधुमक्खियों के छत्ते में रानियां किस स्थिति में हैं।

मैकएफी ने पहले पता किया कि रानी के शुक्राणु कब क्षतिग्रस्त हो सकते हैं, और वे कितनी गर्मी का सामना कर सकते थे। उन्होंने बताया कि हमारे डेटा से पता चलता है कि 15 से 38 डिग्री सेल्सियस के बीच का तापमान रानियों के लिए सुरक्षित है। 38 डिग्री से ऊपर, जीवित शुक्राणुओं का प्रतिशत काफी कम हो जाता है, जो सामान्य 90 प्रतिशत से कम होकर 11.5 प्रतिशत तक आ सकता है।

शोधकर्ताओं ने सात रानी मधुमक्खियों को अलग-अलग छत्ते में किसी को जमीन और किसी को हवा में लटका दिया तथा इन पर तापमान ट्रेकर लगा दिए गए। उन्होंने पाया कि एक पैकेज में 38 डिग्री सेल्सियस तक तापमान में वृद्धि हुई है, जबकि एक में चार डिग्री सेल्सियस तक की गिरावट आई थी। मधुमक्खी कालोनियों को आमतौर पर छत्ते के अंदर के तापमान को नियंत्रित करने के लिए जाना जाता है।

शोधकर्ता यह जानना चाहते थे कि वास्तव में तापमान कितना कम हुआ। उन्होंने अगस्त में कैलिफोर्निया के एल सेंट्रो में तीन छत्तों में तापमान दर्ज किया, जब प्रत्येक छत्ते के परिवेश का तापमान 45 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच गया था। उन्होंने पाया कि तीनों छत्तों में, दो सबसे बाहरी फ्रेमों का तापमान दो से पांच घंटे तक 40 डिग्री सेल्सियस से ऊपर चला जाता है, जबकि दो छत्तों में से एक फ्रेम का तापमान 38 डिग्री सेल्सियस से अधिक हो जाता है।

यूएसडीए के पूर्व वैज्ञानिक जेफ पेटीस ने कहा, यह हमें बताता है कि थर्मोरेग्यूलेट एक कॉलोनी की क्षमता अत्यधिक गर्मी में टूटने लगती है, और रानियां भी छत्ते के अंदर खतरे को महसूस कर सकती हैं। इन प्रमुख मापदंडों को स्थापित करने के बाद, शोधकर्ता रानी मधुमक्खियों के बीच गर्मी के तनाव की निगरानी के लिए प्रोटीन संकेतक (प्रोटीन सिग्नेचर) का उपयोग कर सकते हैं।

अंतरराष्ट्रीय शोध टीम ने खोजी कछुए की नई प्रजाति

एक अंतरराष्ट्रीय टीम के साथ मिलकर जर्मनी के सेनकेनबर्ग के वैज्ञानिक यूवे फ्रिट्ज ने आनुवांशिक विश्लेषण के आधार पर कछुए की एक नई प्रजाति के बारे में बताया है। अब तक माना जाता था कि 'जीनस चेलुस' कछुए की केवल एक ही प्रजाति है। अध्ययन में कहा गया है कि उन जानवरों की प्रजातियों के संरक्षण का पुनर्मूल्यांकन किया जाना चाहिए, जिनको अक्सर अवैध पशु व्यापार में बेच दिया जाता है। इस अध्ययन को साइंटिफिक पत्रिका मॉलिक्युलर फाइटोलेनेटिक्स एंड इवोल्यूशन में प्रकाशित किया गया है। इस प्रजाति का नाम माता-माता बताया गया है, जो पानी के नीचे कीचड़ में छिपे रहते है, इनकी लंबाई 53 सेंटीमीटर तक होती है। ये शैवाल से ढकी चट्टानों की तरह दिखते हैं। लेकिन जब कोई शिकार करने लायक जानवर सामने आता है, तो कछुआ उसे अचानक अपना बड़ा मुंह खोलकर उसे चूसकर पूरा निगल जाता है। ड्रेसडेन में सेनकेनबर्ग प्राकृतिक इतिहास संग्रह के प्रोफेसर डॉ. यूवे फ्रिट्ज बताते हैं यद्यपि ये कछुए अपने विचित्र रूप और असामान्य खाने के व्यवहार के कारण व्यापक रूप से जाने जाते हैं, लेकिन उनकी विविधता और आनुवांशिकी के बारे में बहुत कम जानकारी है। फ्रिट्ज कहते हैं अब हमने यह मान लिया कि इस कवचवाले सरीसृप की केवल एक प्रजाति है जो पूरे दक्षिण अमेरिका में व्यापक रूप से फैली हुई है।

महामारी में संवरा पर्यावरण

जहां एक ओर कोविड-19 ने दुनिया भर में चुनौतियों को पैदा किया है। वही दूसरी तरफ, प्रकृति की सुंदरता और जीवंतता भी लौटी है। महामारी की वजह से आया यह परिवर्तन इंसान को सुखद अहसास के साथ-साथ कुछ सबक व चेतावनी भी देता है। इतिहास गवाह है कि जब-जब इस प्रकार की महामारियां आई हैं, उसके पर्यावरण ने साकारात्मक करवटें ली हैं। क्या जब कोरोना का खतरा खत्म हो जाएगा, तब यहीं पर्यावरण की स्थिति बरकरार रह पाएगी? ऐसे कई सारे सवाल हैं जिनके उत्तर भविष्य के गर्भ में छुपे हैं।

पर्यावरणविद् चन्द्र भूषण कहते हैं कि कोविड-19 के कारण जो पर्यावरणीय सुधार दिख रहे हैं, यह महज अल्पकालिक है। वर्तमान महामारी और पर्यावरण के लिहाज से 1610 में लेटिन अमेरिका में हुए चेचक के प्रकोप को समझना जरूरी है। इस बीमारी की वजह से वहां 5 करोड़ लोगों की मौत हो गई थी। उस दौरान भी कार्बन उत्सर्जन की समस्या बहुत हद तक कम हुई थी, परंतु उसके बाद आर्थिक पुनर्विकास के लिए बृहद स्तर पर जंगलों का दोहन किया था। इतिहास मे ऐसे कई उदाहरण मिलते है जो इस बात की पुष्टि करते है कि महामारियों ने पर्यावरण पर गहरी छाप छोड़ी है, लेकिन महामारी के फौरन बाद आर्थिक विकास की रफ्तार को बढ़ावा देने के लिए प्राकृतिक संसाधनो का बड़े पैमाने पर दोहन भी किया गया है। पद्मभूषण डॉ. अनिल प्रकाश जोशी कहते है कि हमारे पास वर्तमान समय में प्रकृति को समझने का सही मौका है। प्रकृति के साथ छेड़छाड़ के दुष्परिणाम का अंदाजा कोरोना-कहर से लगाया जा सकता है। अन्य पर्यावरणविदों का भी मानना है कि यह वायरस मनुष्य और प्रकृति के बीच पैदा हुए प्राकृतिक असंतुलन का ही दुष्परिणाम है।

दरअसल, विगत कुछ दशकों से हो रहे परिवर्तन, बेरोकटोक आर्थिक विकास और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन ने पारिस्थितिकीय तंत्र के अनुचित तथा असंतुलित प्रयोग को बढ़ाया है। नतीजतन,जैविक और प्राकृतिक असंतुलन की स्थिति पैदा हुई है। पर्यावरणीय विसंगतियों का खुलासा करती विश्व मौसम विज्ञान संगठन द्वारा जारी रिपोर्ट द स्टेट ऑफ द ग्लोबल क्लाइमेट बताती है कि हाल के वर्षों में ग्लोबल वार्मिंग के कारण तापमान बढ़ोतरी के रिकॉर्ड टूटे हैं। मसलन, जहां वर्ष 2019 सबसे गर्म वर्ष रिकॉर्ड दर्ज किया गया और वही वर्ष 2010-2019 के दशक को सबसे गर्म दशक के रूप में रिकॉर्ड किया गया।

ये तथ्य हमें सोचने पर मजबूर करते हैं कि आखिर पिछले कुछ दशकों में ऐसा क्या हुआ कि प्रकृति की ये दुर्गति हुई है। यकीनन संकट के इस दौर में मनुष्य के अति-भौतिकवाद,उत्पादनवाद और उपभोगवाद को विकास का पर्याय मान लेने की मानसिकता पर सवाल उठा है। पर्यावरणविद वंदना शिवा कहती है कि वैश्वीकृत औद्योगिक व्यवस्था, अपर्याप्त खाद्य और वर्तमान कृषि का मॉडल न केवल सृष्टि के अन्य प्रजातियों के पारिस्थितिक आवास में लगातार घुसपैठ कर रहा है बल्कि जीव-जंतुओं और वनस्पतियों की अखंडता और स्वास्थ्य के प्रति भी असम्मान का भाव पैदा कर रहा है। परिणाम स्वरूप कोरोना जैसे नई-नई बीमारियां मानव जीवन में दस्तक दे रही है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम ने अपनी एक रिपोर्ट मे इस बात की पुष्टि भी कर चुका है कि मनुष्यों में हर चार महीने में एक नई संक्रामक बीमारी सामने आती है। इन बीमारियों में से 75 फीसदी बीमारी जानवरों से आती है। इसके बावजूद, इंसान यह भूलता जा रहा है जैव-विविधता को चोट पहुंचना कितना खतरनाक है।

इसीलिए अगर हमे वाकई आर्थिक विकास और संवहीयता के बीच सह-अस्तित्व की भावना बनाए रखनी है तो उपभोग और जीवन-शैली को इस तरह का बनाना पड़ेगा जिससे प्रकृति पर नकारात्मक असर न पड़े। इस प्रसंग में महात्मा गांधी को उध्दृत करना समीचीन होगा। गांधी अपनी पुस्तक हिन्द स्वराज में कहते हैं कि पृथ्वी सभी मनुष्यों की जरूरतें पूरी करने के लिए पर्याप्त संसाधन प्रदान करती है, लेकिन लालच पूरा करने के लिए नहीं। गांधी जी इस पंक्ति को आत्मसात करने के साथ प्रकृति के साथ एकात्मकता, समन्वय और सह-अस्तित्व का भाव ही सृष्टि में संतुलनपरक है। अतः महामारी और पर्यावरणीय विसंगतियों को दूर करने के लिए आर्थिक स्तर पर मूलभूत संरचनात्मक बदलाव लाने होंगे। इस बीमारी ने हमें यह अवसर प्रदान किया है कि स्थानीय और वैश्विक स्तर पर अर्थव्यवस्था और पर्यावरणीय राजनीति को पारिस्थिकीय सम्मान और न्याय के तर्ज पर पुनर्भाषित किया जाए। भूमंडलीकरण के बरक्स स्थानीयकरण को बढ़ावा देने की भी चर्चा हो रही है, लेकिन हमे यह नहीं भूलना चाहिए कि इस बीमारी की तरह पर्यावरणीय समस्या भी वैश्विक है, इसलिए रोजगार को बढ़ावा देने के साथ-साथ वैश्विक संस्थाओं मे सहयोग और निवेश को भी मजबूत किया जाना आवश्यक है। न केवल हरित अर्थव्यवस्था और पर्यावरणीय से जुड़े कार्यक्रम को बढ़ावा देने की जरूरत है बल्कि व्यक्तिगत, कानूनी व प्रबंधकीय स्तर पर भी परिस्थिकीय-प्रबंधन व संरक्षण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इन प्रयासों, नवाचारों और राजनीतिक इच्छा-शक्ति के सहारे हम महामारी संकट से उबरने में कामयाब हो सकते हैं।

स्वच्छ हुआ पर्यावरण, चुनौती अब संरक्षण की

कोरोना वायरस संक्रमण के खतरे के कारण लॉकडाउन होने से गत एक माह से लोग घरों में ही सिमटे है और बाजार सूने पड़े है। वाहन चलना बहुत कम हो गए है। ऐसे में प्रदूषण का स्तर घट गया है और नदियों का जल स्वच्छ होने लगा है तो महसूस हो रहा है कि वसुधा यानि पृथ्वी हमे कितने उपहार दे रही है। चित्तौडग़ढ़ में भी जल,वायु प्रदूषण का स्तर कम हुआ है और लोग प्राकृतिक सौगातों को पहले से बेहतर रूप में सामने पा रहे है।

चित्तौडग़ढ़. कोरोना वायरस संक्रमण के खतरे के कारण लॉकडाउन होने से गत एक माह से लोग घरों में ही सिमटे है और बाजार सूने पड़े है। वाहन चलना बहुत कम हो गए है। ऐसे में प्रदूषण का स्तर घट गया है और नदियों का जल स्वच्छ होने लगा है तो महसूस हो रहा है कि वसुधा यानि पृथ्वी हमे कितने उपहार दे रही है। चित्तौडग़ढ़ में भी जल,वायु प्रदूषण का स्तर कम हुआ है और लोग प्राकृतिक सौगातों को पहले से बेहतर रूप में सामने पा रहे है। अब तक जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई,शहरीकरण के कारण बढ़ते क्रंकीट के जंगल में अवैध शिकार और खेती बाड़ी में कीटनाशक दवाओं का उपयोग ने पर्यावरण को नुकसान पहुंचा रहे हैं। चित्तौडग़ढ़ जिले को प्रकृति से सीतामाता अभयारण्य, बस्सी अभयारण्य सहित कई ऐसे प्राकृतिक उपहार मिले है जिनको हमे सहज कर रखना है। प्रदूषण एवं अंधाधुंध खनन इनकी रक्षा के लिए बड़ी चुनौंती बन गया है। हरियाली को बरकरार रखने के लिए पेड़ों की कटाई रोकनी होगी, नदियों को साफ रखना होगाए अपने आसपास भी सफाई रखनी होगी। चित्तौड़ दुर्ग पर छाई हरितिमा संरक्षण भी वसुधा संरक्षण का ही हिस्सा माना जाएगा। प्रकृति का अंधाधुंध दोहन और अनियत्रित उपभोग पर्यावरण से जुड़ी अनेक समस्याओं का कारण बन रहा है। धरती का तापमान लगातार वर्षवार बढ़ रहा है। समुद्र का बढ़ता जलस्तर भारी खतरे का संकेत है। मनुष्य के प्रकृति की व्यवस्था में अनावश्यक छेड़छाड़ के कारण आज ग्लोबल वार्मिंग से लेकर अतिवृष्टि या अनावृष्टि जैसी प्राकृतिक आपदाओं से हमें जूझना पड़ रहा है।

आदत बना ले बिना वाहन चलना

कपासन के पर्यावरण प्रेमी उज्जवल दाधीच ने कहा कि यदि लॉकडाउन पीरियड के बाद भी वाहनों को घर में छोडने़ की थोड़ी भी आदत बन गई तो प्रदूषण हावी नहीं होगा। हम सभी लोगो को घर में कहीं न कहीं बर्ड फ़ीडर्स स्थापित करने चाहिए जिससे विलुप्त होती गोरैया जैसी प्रजातियों को आशियाना मिल सके। दाधीच ने कहा कि पृथ्वी दिवस पर हम पर्यावरण से छेड़छाड़ रोकने का संकल्प लें।

कब शुरू हुई पृथ्वी दिवस मनाने की शुरूआत

धरती पर रहने वाले तमाम जीव,जंतुओं और पेड़.पौधों को बचाने तथा दुनिया भर में पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लक्ष्य के तहत 1970 में 22 अप्रेल के दिन ही पृथ्वी दिवसष् मनाने की शुरुआत हुई थी। तब इस परंपरा को 192 देशों ने अपनाया था।आज लगभग पूरी दुनिया में प्रति वर्ष पृथ्वी दिवस के मौके पर धरती का पर्यावरण सुरक्षित बनाए रखने और हर तरह के जीवजंतुओं को उनके हिस्से का स्थान और अधिकार देने का संकल्प लिया जाता है।

लॉक डाउन में पृथ्वी संरक्षण के लिए ऐसे करे सहयोग

-नल को उस समय बंद कर दो जब 20 सेकंड्स तक साबुन से हाथ धो रहे हो

- टिश्यू पेपर के बजाय कपड़े का उपयोग करें ताकि टिश्यू पेपर बनाने के लिए कम लकड़ी की जरूरत हो।

- प्लास्टिक डिस्पोजेबल आइटम का कम से कम उपयोग करें

- पेड़ों का भोजन कार्बन है। भोजन बर्बाद न हो इसलिए उतनी ही कार्बन पैदा करो जिसे पेड़ खा सकें।

पर्यावरण प्रदूषित कर रहे यूपी के पॉल्ट्री फार्म, पांच साल पुरानी गाइडलाइन लागू करेगा यूपीपीसीबी

उत्तर प्रदेश में मुर्गी पालन केंद्रों के लिए पर्यावरणीय मानकों की कोई ठोस गाइडलाइन न होने के कारण प्रदूषण जारी है। नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (एनजीटी) के 16 दिसंबर, 2019 को दिए गए सख्त आदेश के बाद उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (यूपीपीसीबी) ने केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी) की 2015 की गाइडलाइन को ही राज्य में लागू करने का मन बनाया है।

नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (एनजीटी) में हलफनामा दाखिल कर यह जानकारी दी है कि मुर्गी पालन केंद्रों के लिए 20 अक्तूबर, 2015 को सीपीसीबी की ओर से तैयार की गई पर्यावरणीय गाइडलाइन को ही जस का तस राज्य में लागू किया जा सकता है। इस गाइडलाइन को ही राज्य में लागू करने के लिए प्रस्तावित किया गया है।

याची सुंदर की ओर से पर्यावरणीय प्रदूषण फैलाने वाले मुर्गी पालन केंद्रों के खिलाफ कार्रवाई करने की मांग उठाई गई थी। वहीं 28 अगस्त, 2019 को यूपीसीबी ने मुर्गी पालन केंद्रों के जरिए पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्या के सवाल पर अपनी रिपोर्ट में कहा था कि राज्य में एक लाख से कम पक्षियों वाले पालन केंद्रों को कंसेंट टू ऑपरेट (संचालन की अनुमति) की आवश्यकता नहीं है। इसके बाद एनजीटी ने फटकार लगाते हुए अपने आदेश में कहा था कि यह स्पष्ट है कि मुर्गी पालन केंद्रों के जरिए हो रहे पर्यावरणीय प्रदूषण को लेकर राज्य के पास कोई गाइडलाइन नहीं है। न ही पॉल्ट्री फार्म के प्रदूषण को कम करने के लिए कोई उपाय किए गए हैं। पॉल्ट्री फॉर्म से होने वाले दूषित पानी डिस्चार्ज को लेकर भी कोई नियम कायदा नहीं है। इसलिए राज्य को सभी ऐसे मुर्गी पालन केंद्रों के लिए प्रदूषण नियंत्रण वाली गाइडलाइन विकसित करनी चाहिए।

सीपीसीबी ने पोल्ट्री फार्म स्थापित और संचालित करने के लिए 2015 की गाइडलाइन में प्रदूषण रोकथाम और बचाव के लिए कई मानक निर्देशित किए हैं। मसलन पोल्ट्री फार्म को भू-जल स्तर से 2 मीटर की ऊंचाई और फिर तल से 0.5 मीटर ऊंचाई पर बनाना है। पोल्ट्री फॉर्म से निकलने वाले गंदे पानी को एक टैंक में एकत्र करना है। वाटर बॉडीज से दस मीटर की दूरी कम से कम रखना है। पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम के लिए सीपीसीबी की ओर से स्थापना और संचालन के कई मानक तय किए गए हैं।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008